राम प्रसाद नारायण साही और अन्य

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

[पतंजलि शास्त्री मु.न्याय, मुखर्जी, विवियन बोस,

गुलाम हसन और भगवती न्याय.]

भारत का संविधान, 1950, अनु. 13, 14-साथी भूमि (पुनर्स्थापन) अधिनियम, 1950-एक व्यक्तिगत पक्ष के साथ भूमि के बन्दोबस्त की घोषणा करने वाला कानून शून्य- वैधता-कानूनों के समान संरक्षण के मौलिक अधिकार का उल्लंघन- भेदभाव- तर्कसंगतता की उपधारणा ।

कोर्ट ऑफ वाड्र्स ने अपीलकर्ताओं को बेतिया राज से संबंधित भूमि का एक बड़ा क्षेत्र, जो उस समय कोर्ट ऑफ वाड्र्स के प्रबंधन के तहत था, राजस्व बोर्ड की सिफारिश पर, सामान्य दरों से आधे पर प्रदान किया। कुछ वर्षों बाद, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्य समिति ने राय व्यक्त की कि भूमि का बन्दोबस्त सार्वजनिक हित के खिलाफ था, और 1950 में, बिहार विधानमंडल ने साथी भूमि (पुनर्स्थापना) अधिनियम, 1950 नामक एक अधिनियम पारित किया , जिसमें घोषणा की गई कि, तत्समय प्रवृत किसी भी कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद , अपीलकर्ताओं के पक्ष में पारित बन्दोबस्त शून्य और निष्प्रभावी होगा और समझौते के

किसी भी पक्ष या उसके उत्तराधिकारियों के हित में यह नहीं माना जाएगा कि उन्होंने कोई अधिकार प्राप्त किया है या इसके तहत कोई दायित्व वहन किया, और कलेक्टर को अधिकार दिया कि यदि अपीलकर्ता भूमि के प्रत्यास्थापन से इनकार करें तो उन्हें बेदखल कर दिया जाए। अपीलकर्ताओं ने यह आक्षेप लगाते हुए कि यह अधिनियम असंवैधानिक है, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत बिहार राज्य को इस अधिनियम के तहत कोई भी कार्रवाई करने से रोकने के लिए, परमादेश की रिट के लिए आवेदन किया। यह पाया गया कि इसी तरह की शर्तों पर बेतिया राज से संबंधित भूमि की कई अन्य बंदोबस्त थे, जिनके खिलाफ सरकार ने कोई कार्रवाई नहीं की थी।

अभिनिर्धारित किया कि, अपीलकर्ताओं और राज्य के बीच विवाद वास्तव में एक निजीविवाद था और मामले में लागू कानून के अनुसार एक न्यायिक न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित किया जाने वाला मामला था, और जैसा कि विधानमंडल ने प्रश्नगत अधिनियम को पारित करते हुए अपीलकर्ताओं को अलग करते हुए उन्हें उनके विधितः गठित न्यायालय से निर्णीत करवाने के अधिकार से वंचित कर दिया था, अधिनियम ने संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधान जो प्रत्येक नागरिक को विधियों के समान संरक्षण की गारंटी देते है, का उल्लंघन किया, तथा शून्य था।

ऐसा विधायन जो किसी व्यक्ति विशेष को उसके साथी विषयों से अलग करता है और एक निर्योग्यता के अधीन करता है जो दूसरों पर नहीं

थाेपा गया है और जिसके खिलाफ शिकायत करने तक के अधिकार को ले लिया जाए, अत्यधिक भेदभावपूर्ण है।

यद्यपि एक विधायी अधिनियम की संवैधानिकता के बारे में उपधारणा उसके पक्ष में है और यह उपधारणा की जानी चाहिए कि विधायिका अपने स्वयं के लोगों की आवश्यकता को समझती है तथा सही ढंग से उनकी सराहना करती है, फिर भी जब कानून की दृष्टि में ऐसा कोई वर्गीकरण नहीं है और किसी को भी व्यक्तिगत रूप से या समूह विशिष्ट और दूसरों के पास न होने वाली किसी भी विभेदक विशेषता के संदर्भ में चुनने का कोई प्रयास नहीं किया गया है, यह उपधारणा राज्य के लिए बहुत थोड़ी या कोई सहायता नहीं करती है।

एमेरूनिसा बेगम बनाम महबूब बेगम [1953] एस. सी. आर. 404 और कोलोराडो की खाड़ी आदि। को. वी. एलिस (165 यू. एस. 150) का उल्लेख किया गया

सिविल अपील क्षैत्राधिकारिता - सिविल अपील सं. 59 वर्ष 1952 ।

पटना उच्च न्यायालय(रामास्वामी और सरजू प्रसाद न्याय.) के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत विविध न्यायिक मामला सं. 204 वर्ष 1950 में पारित दिनांक 3 के निर्णय और आदेश से अपील।

संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत मूल याचिका संख्या 20 वर्ष 1952 की भी सुनवाई इस अपील के साथ हुई।

अपीलार्थियों के लिए पी. आर. दास (उनके साथ बी. सेन)।

एम. सी. सीतलवाड़, भारत के महान्यायवादी और महाबीर प्रसाद, बिहार के महाधिवक्ता (उनके साथ जी. एन. जोशी) उत्तरदाताओं के लिए।

20 फरवरी 1953 को न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया -

पतंजलि शास्त्री मु.न्याय.- मैं उस फैसले से सहमत हूँ, जिसे मेरे विद्वान भाई मुखर्जी देने वाले हैं । लेकिन मैं महत्वपूर्ण संवैधानिक मुद्दा शामिल होने के कारण इसे देखते हुए कुछ शब्द जोड़ना चाहता हूं।

तथ्य सरल हैं। अपीलकर्ताओं ने बिहार के बेतिया एस्टेट में साथी फार्म के नाम से जाने जाने वाले गांव में लगभग 200 बीखा भूमि का बन्दोबस्त प्राप्त किया, तब से और तब से अयोग्य मालिकाना हक रखने वालों की ओर से जो इस मामले में दूसरा प्रतिवादी है, कोर्ट ऑफ वाड्र्स के प्रबंधन में है । ज़मीनों का बन्दोबस्त प्रचलित किराये की दर पर किया गया था, लेकिन अपीलकर्ता जिन्हें मालिकाना हक रखने वालों के दूर के रिश्तेदार कहा जाता है को रियायत के रूप में सलामी या देय प्रीमियम सामान्य दर से आधी दर पर तय किया गया था। अपीलकर्ताओं ने सलामी का भुगतान किया और 2 नवंबर, 1946 को भूमि पर कब्ज़ा कर लिया, और तब से नियमित रूप से लगान का भुगतान कर रहे हैं। 13 जून, 1950 को, बिहार विधानमंडल ने साथी भूमि (पुनर्स्थापना) अधिनियम, 1950 नामक एक अधिनियम पारित किया। इस कानून की उत्पत्ति को बिहार राज्य जो यहां पहला प्रतिवादी है की ओर से दायर जवाबी हलफनामे में समझाया गया है।

इन जमीनों के बंदोबस्त के साथ-साथ कुछ अन्य जमीनों को याचिकाकर्ताओं के साथ श्री प्रजापति मिश्रा को बंदोबस्ती के खिलाफ रिपोर्ट और जिस गैरकानूनी तरीके से ये बंदोबस्त किए गए, उसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्य समिति के पास ले जाया गया, जिसने एसी जांच जो उचित समझी, करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंची कि याचिकाकर्ताओं के साथ इन जमीनों का निपटान कानून और सार्वजनिक नीति के प्रावधानों के विपरीत था और सिफारिश की गई कि इन जमीनों को बेतिया राज्य को वापस दिलाने के लिए बिहार राज्य द्वारा कदम उठाए जाने चाहिए। इसके अनुसरण में याचिकाकर्ताओं और उक्त प्रजापति मिश्रा से बेतिया एस्टेट को भूमि वापस करने का अनुरोध किया गया था। यद्यपि श्री प्रजापति मिश्रा ने अपने साथ तय की गई भूमि वापस कर दी, याचिकाकर्ताओं ने ऐसा करने से इनकार कर दिया।

साथी भूमि (पुनर्स्थापना) विधेयक के उद्देश्यों और कारणों का विवरण इस प्रकार है:

> "जैसा कि यह माना गया है कि श्री राम प्रसाद नारायण साही और श्री राम रेखा प्रसाद नारायण साही के साथ कोर्ट ऑफ वार्ड्स के तहत चंपारण जिले में साथी भूमि का बन्दोबस्त कानून के प्रावधानों के विपरीत है और श्री राम प्रसाद नारायण साही और श्री राम रेखा नारायण साही ने बेतिया एस्टेट को जमीन वापस करने से इनकार कर

दिया है, सरकार ने इन जमीनों को बेतिया एस्टेट को प्रत्यावर्तित करने के लिए एक कानून बनाने का फैसला किया है।"

विवादित अधिनियम में तीन धाराएँ हैं। धारा 2(1) घोषित करती है कि "तत्समय प्रवृत किसी विधि में किसी भी बात के होने के बावजूद" अपीलकर्ताओं द्वारा प्राप्त समझौता "अमान्य और शून्य" है, और यह कि "निपटान के किसी भी पक्ष या हित में उत्तराधिकारी के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि उसने इसके अंतर्गत कोई अधिकार अर्जित किया है या कोई दायित्व वहन किया है।" उप-धारा (2) में प्रावधान है कि अपीलकर्ताओं और उनके हित में उत्तराधिकारियों को "इस अधिनियम के प्रारंभ होने की तारीख से उक्त भूमि पर कब्जा छोड़ देना होगा और यदि वे ऐसा करने में विफल रहते हैं, तो चंपारण के कलेक्टर उन्हें बेदखल कर देंगे और भूमि बेतिया वाड्र्स एस्टेट के कब्जे में बहाल कर देंगे।" उपधारा (3) में विचाराधीन भूमि की बहाली पर संपत्ति द्वारा पट्टेदारों को सलामी राशि की राशि और सुधार की लागत, यदि कोई हो, की वापसी का प्रावधान करती है।

बिहार राज्य के लिए इस न्यायालय में दर्ज "मामले" में, कानून को उचित ठहराने और इसकी वैधता को निम्नलिखित आधारों पर बनाए रखने की मांग की गई है:

> "यह सुस्थापित है कि सर्वांगीण शक्तियों वाला एक विधानमंडल जब अपनी शक्तियों के दायरे में कानून बनाता है, ऐसा कानून बनाने में सक्षम है जो आम तौर पर समाज या किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के एक वर्ग पर ही लागू हो सकता है। निवेदन किया गया है कि कोर्ट ऑफ वाड्र्स द्वारा दिए गए बेतिया एस्टेट से संबंधित भूमि के अनुदान जो कोर्ट आफ वार् संदिग्ध वैधता वाले थे; इसलिए उन्हें आक्षेपित अधिनियम द्वारा निपटाया गया है .. अपीलार्थीगण द्वारा केवल एक आरोप जिसकी पुष्टि नहीं की गई है को छोड़कर कोई सबूत पेश नहीं किया गया है, कि लगभग 2000 एकड़ भूमि का निपटान यह दिखाने के लिए किया गया था कि समान परिस्थितियों में जिन व्यक्तियों के साथ समान समझौते किए गए थे,
>
> उनके साथ अलग व्यवहार किया गया था। यह प्रस्तुत किया गया है कि वादग्रस्त अधिनियम के संदर्भ में, वर्गीकरण का युक्तियुक्त आधार है।"

इन तर्कों के समर्थन में *चरणजीत लाल बनाम भारत संघ, एआईआर (1950) एस.सी.आर.869* में इस न्यायालय के बहुमत के निर्णय पर भरोसा किया जाता है। हालाँकि, उस मामले में, बहुमत ने कानून को बरकरार रखना उचित समझा, हालांकि इससे एक विशेष संयुक्त स्टॉक कंपनी के शेयरधारकों के अधिकारों और हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, क्योंकि कंपनी के मामलों के कुप्रबंधन ने एक आवश्यक वस्तु के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डाला और समुदाय के एक वर्ग में गंभीर बेरोजगारी पैदा हुई। श्रीमान न्याय. दास और मेरा विचार था कि किसी विशेष नामित व्यक्ति या निगम के खिलाफ निर्देशित कानून स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण था और संवैधानिक रूप से उचित नहीं ठहराया जा सकता था, भले ही ऐसे कानून से जनता को कुछ लाभ हुआ हो। राजनीतिक दलों द्वारा सरकार की व्यवस्था में, मैं विशेष अधिनियमों में निहित खतरे से आशंकित था जो विशेष रूप से नामित व्यक्तियों को उनकी स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित करता है क्योंकि विधायिका उन्हें कदाचार का दोषी मानती है, और मैंने अपनी असहमतिपूर्ण राय में कहा:

> "कुप्रबंधन या अन्य कदाचार पर आधारित विधायन और किसी निर्दिष्ट व्यक्ति या कॉर्पोरेट निकाय पर लागू होने वाला विभेदकारी तथा कुख्यात संसदीय प्रणाली जैसे कि ब्रिटेन में पूर्व में प्रवर्तित बिलों को पारित करके किसी व्यक्तिगत अपचारी को बिल पारित कर दण्डित किया जाता

है से बहुत दूर नहीं है, और मुझे लगता है कि न्यायिक प्रोत्साहन प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए"

मेरी आशंका सच हो गई है. हाल ही में हमारे सामने हैदराबाद का (*अमीरुन्निसा बेगम बनाम महबूब बेगम,* दीवानी अपील सं.63 वर्ष 1952) *[1953] एस. सी. आर. 404* का एक मामला आया था, जहां उस राज्य के विधितः गठित विधायी प्राधिकरण ने एक मृत व्यक्ति की संपत्ति के प्रतिद्वंद्वी दावेदारों के दो सेटों के बीच उत्तराधिकार विवाद में हस्तक्षेप किया था। और एक के दावे को खारिज कर दिया और उस प्रभाव के लिए एक विशेष "कानून" बनाकर संपत्ति को दूसरे के लिए घोषित कर दिया। और अब इस मामले को अनिवार्य रूप से समान प्रकार के बिहार से आया है। अपीलकर्ता बेतिया एस्टेट में कुछ भूमि पर स्वामित्व का दावा करते हैं एक बन्दोबस्त जिसके बारे में उनका दावा है कि इसे कानूनी तौर पर कोर्ट ऑफ वाड्र्स से प्राप्त किया गया है, जबकि अब एस्टेट की ओर से यह आरोप लगाया गया है कि यह समझौता एस्टेट के लाभ के लिए नहीं था और कानून के विपरीत था, जैसा कि कोर्ट ऑफ वाड्र्स ने उस प्रश्न पर अपना दिमाग नहीं लगाया । यह विशुद्ध रूप से निजी पार्टियों के बीच का विवाद है, जिसका निर्धारण

विधिवत गठित अदालतों द्वारा किया जाता है, जिसे हर स्वतंत्र और सभ्य समाज में, अच्छी तरह से देखने के बाद, विवादित कानूनी अधिकारों पर निर्णय लेने का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा जाता है जो स्थापित प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय जिनमें सुनवाई का अधिकार, गवाहों को पेश करने का अधिकार आदि शामिल हैं। यह वह सुरक्षा है जिसकी गारंटी कानून सभी व्यक्तियों को समान रूप से देता है, और हमारा संविधान का अनु.14 प्रत्येक राज्य किसी को भी ऐसी सुरक्षा देने से इनकार करने पर रोक लगाता है। हमारे समक्ष अपीलकर्ताओं को इस सुरक्षा से वंचित कर दिया गया है। सत्ता में पार्टी का एक राजनीतिक संगठन ऐसी जांच करने के बाद निर्णय लेता है क्योंकि उसे उचित लगता है कि प्रश्न में बन्दोबस्त "कानून के प्रावधानों तथा सार्वजनिक नीति के विपरीत " था, और राज्य विधानमंडल, इस तरह के निर्णय के आधार पर, घोषणा करने का इरादा रखता है बन्दोबस्त अकृत और शून्य" और अपीलकर्ताओं को बेदखल करने और एस्टेट को भूमि की बहाली का निर्देश देता है। इस असाधारण प्रक्रिया के लिए दिए गए कारण वास्तव में उनके परेशान करने वाले प्रभावों के लिए उल्लेखनीय हैं। ऐसा कहा जाता है कि"इलाके के किरायेदारों के बीच आंदोलन हुआ और इलाके में रहने वाले व्यक्तियों ने अपीलकर्ताओं के

जमीन पर कब्जे के खिलाफ विरोध किया, जिसके कारण शांति भंग हुई और आपराधिक मामले दर्ज किए गए।" जब भी, किसी इलाके में लोगों का एक वर्ग, प्रतिकूल दावा करके, किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति के शांतिपूर्ण उपभोग में परेशान करता है, तो बिहार सरकार को लगता होगा कि पुलिस के लिए हस्तक्षेप करना आवश्यक नहीं है। जब तक वह कानून के अनुसार बेदखल नहीं हो जाता, तब तक उसके उपभोग की रक्षा करता है, लेकिन विधायिका उस व्यक्ति को उसके कब्जे से बेदखल करने के लिए "कानून" बनाकर हस्तक्षेप कर सकती है। हमारे सामने अब जो कानून है, वह कानून के शासन से जीवन शक्ति को खत्म करने के लिए बनाया गया है, जिसकी घोषणा हमारा संविधान स्पष्ट रूप से करता है, और यह आशा की जानी चाहिए कि इस देश में लोकतांत्रिक प्रक्रिया इस तरह से काम नहीं करेगी।

बी.के मुखर्जी, न्याय.: यह अपील, जो संविधान के अनु. 132 (1) के तहत पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पर हमारे सामने आई है , उस न्यायालय की एक डिवीजन बेंच के दिनांक 3-1-1952 के फैसले के खिलाफ निर्देशित है, जिसके द्वारा विद्वान न्यायाधीशों ने संविधान के अनु. 226 के तहत अपीलकर्ताओं

की याचिका खारिज कर दी थी। याचिका में प्रार्थना परमादेश की प्रकृति में एक रिट के लिए थी, जिसमें विपरीत पक्ष को 1950 में बिहार विधान सभा द्वारा पारित एक अधिनियम के तहत कोई कार्रवाई न करने का व परमादेश की प्रकृित की रिट जारी करने का निर्देश दिया गया था, जिसे साथी भूमि (पुनर्स्थापना) अधिनियम के रूप में जाना जाता था, जिसे शून्य और असंवैधानिक के रूप में चुनौती दी गई थी।।

कार्यवाही के पक्षों के बीच विवाद के बिंदुओं की सराहना करने के लिए, भौतिक तथ्यों को संक्षेप में बताना आवश्यक होगा । महारानी जानकी कोएर, अपील में प्रतिवादी 2, बिहार में बेतिया राज के नाम से जानी जाने वाली एक व्यापक संपत्ति की वर्तमान मालिक हैं, जिसे बंगाल अधिनियम 1879 के तहत गठित कोर्ट ऑफ वाड्र्स, बिहार द्वारा उनकी ओर से आयोजित और प्रबंधित किया जाता है। 19-7-1946 को अपीलकर्ता, जो दो भाई हैं और महारानी के दूर के रिश्तेदार हैं, ने एस्टेट के प्रबंधक के माध्यम से बिहार सरकार को एक अभ्यावेदन दिया, जिसमें 200 बीघे भूमि के रैयती अधिकार में बन्दोबस्त के लिए प्रार्थना की गई। अधिमानतः साथी फार्म या मटेरिया फार्म में कुछ मात्रा में बंजर भूमि के साथ 20-7-1946 को वाड्र्स एस्टेट के तत्कालीन प्रबंधक ने चंपारण के कलेक्टर को एक पत्र लिखकर सिफारिश की कि आवेदकों को

प्रार्थना के अनुसार भूमि का निपटान दिया जाए, बिना किसी सेलामी के भुगतान के। हालाँकि, कलेक्टर इस प्रस्ताव से सहमत नहीं थे, न ही तिरहुत डिवीजन के आयुक्त, और मामला तब राजस्व बोर्ड के समक्ष विचार के लिए आया, जिसने सिफारिश की कि आवेदकों के साथ समझौता किया जा सकता है, बशर्ते वे सेलामी सामान्य दरों से आधी पर भुगतान करने के लिए सहमत हों। 14-10-1946 को राजस्व बोर्ड की सिफारिश को प्रांतीय सरकार ने स्वीकार कर लिया और छह दिन बाद कोर्ट ऑफ वाड्र्स ने सेलामी धन और किराए के भुगतान के लिए पट्टेदारों में से एक से 5000 रुपये 2-11-1946 को चेक स्वीकार कर लिया। वर्ष 1354 एफएस के लिए , अपीलकर्ताओं को जमीन का कब्जा दे दिया गया और 18 नवंबर को, कोर्ट ऑफ वाड्र्स के प्रबंधक के आदेश के बाद भूमि की सेलामी रुपये 3,988 आने असामान्य और किराया रु. वर्ष 797 आने असामान्य प्रति वर्ष तय करने का एक औपचारिक आदेश दर्ज किया गया। उसी दिन, एक हिसाब बंदोबस्ती फॉर्म, जो रैयती बस्तियों के लिए एस्टेट में नियोजित सामान्य फॉर्म है, पर कोर्ट ऑफ वाड्र्स की ओर से सर्कल ऑफिसर द्वारा और स्वयं के लिए और साथ ही गठित अटॉर्नी के लिए पट्टेदारों में से एक द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। अन्य पट्टेदारों की. इसमें कोई विवाद नहीं है कि निर्धारित लगान के भुगतान पर तब से पट्टाधारकों के पास जमीन बनी रही।

3-6-1950 को बिहार विधान सभा ने साथी भूमि (पुनर्स्थापना) अधिनियम के नाम से जाना जाने वाला एक अधिनियम पारित किया, जिसे 13-6-1950 को राज्यपाल की सहमति प्राप्त हुई। अधिनियम का उद्देश्य, जैसा कि प्रस्तावना में कहा गया है, बेतिया वाड्र्स एस्टेट से संबंधित कुछ भूमि की बहाली प्रदान करना है, जो कुछ व्यक्तियों के पक्ष में कानून के प्रावधानों के विपरीत तय की गई थी। धारा 2, जो अधिनियम में एकमात्र महत्वपूर्ण धारा है, उप-धाराओं में अधिनियमित होती है। (1) बेतिया कोर्ट ऑफ वाड्र्स एस्टेट की ओर से अपीलकर्ताओं के साथ साथी भूमि (अधिनियम की अनुसूची में वर्णित) की बंदोबस्ती, संपत्ति के प्रबंधक के आदेश दिनांक 18-11-1946 के अनुसार, शून्य घोषित की जाती है और शून्य और बन्दाेबस्त के किसी भी पक्ष या उसके उत्तराधिकारी-हित को इसके तहत कोई अधिकार प्राप्त करने या कोई दायित्व उठाने वाला नहीं माना जाएगा। उप-धारा दो में इस आशय का एक निर्देश शामिल है कि उक्त पट्टेदार और उनके उत्तराधिकारी अधिनियम के प्रारंभ होने की तारीख से भूमि पर कब्जा छोड़ देंगे और यदि वे ऐसा करने में विफल रहते हैं, तो चंपारण का कलेक्टर उन्हें बेदखल कर देगा और भूमि को बेतिया एस्टेट के कब्जे में वापस कर देगा। तीसरे और अंतिम उप-धारा में यह प्रावधान है कि बेतिया वार्ड एस्टेट भूमि की बहाली पर पट्टेदारों को उनके द्वारा भुगतान की गई सेलामी राशि का भुगतान करेगा और वह राशि भी देगा जो उनके द्वारा अधिनियम के लागू होने से पहले तक भूमि पर सुधार करने में खर्च की गई होगी।

सार रूप में, इसलिए, अधिनियम ने 18-11-1946 को बेतिया वार्ड एस्टेट द्वारा अपीलकर्ताओं को दिए गए पट्टे को अवैध और निष्क्रिय घोषित कर दिया और तरीका निर्धारित किया कि इस घोषणा को प्रभावी किया जाना था और पट्टेदारों को जमीनों से बेदखल कर दिया गया था।

28-8-1950 को, अपीलकर्ताओं ने याचिका दायर की, जिसमें से संविधान के अनु. 226 के तहत यह अपील उत्पन्न होती है। पटना उच्च न्यायालय में साथी भूमि अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गई है और उत्तरदाताओं को उक्त अधिनियम के तहत कोई भी कदम उठाने से रोकने या अपीलकर्ताओं के संबंध में कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए रिट की मांग की गई है। पट्टे में शामिल भूमि का. याचिकाकर्ताओं द्वारा यह दावा किया गया था कि विवादित कानून को पारित करके बिहार विधानमंडल ने वास्तव में न्यायपालिका की शक्ति को छीन लिया है और यह अधिनियम अभिव्यक्ति के उचित अर्थों में बिल्कुल भी कानून नहीं है। उठाए गए अन्य मौलिक तर्क यह थे कि विधायन शून्य था क्योंकि यह संविधान के अनु. 14, 19(1)(एफ) और 31 के तहत गारंटीकृत याचिकाकर्ताओं के मौलिक अधिकारों के साथ टकराव था।

याचिकाकर्ताओं की प्रार्थना का विरोध करने वाले उत्तरदाताओं ने अन्य बातों के साथ-साथ अपने जवाबी हलफनामे में कहा कि कोर्ट ऑफ वाड्र्स द्वारा अपीलकर्ताओं के साथ विचाराधीन भूमि का बन्दोबस्त संपत्ति के लाभ या वार्ड के लाभ के लिए नहीं था और वह यह लेन-देन वाड्र्स एस्टेट

द्वारा अपना दिमाग ठीक से लगाए बिना किया गया था। आगे कहा गया कि समझौता होने के बाद, इलाके के किरायेदारों के बीच काफी आंदोलन हुआ, जिसके कारण कुछ आपराधिक कार्यवाही शुरू हुई। इन परिस्थितियों में, मामला भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्य समिति के संज्ञान में लाया गया और कार्य समिति की राय थी कि इन जमीनों का बन्दोबस्त सार्वजनिक हित के खिलाफ था। इसलिए, पट्टेदारों को भूमि खाली करने के लिए कहा गया और उनके इनकार करने पर विचाराधीन कानून पारित किया गया।

याचिका पर रामास्वामी और सरजू प्रसाद, न्याय. की खंडपीठ ने सुनवाई की। रामास्वामी, न्याय. ने याचिकाकर्ताओं द्वारा उनके खिलाफ उठाए गए सभी बिंदुओं पर निर्णय लिया और माना कि अधिनियम न तो बिहार विधानमंडल के अधिकार क्षेत्र से बाहर है और न ही संविधान के अनु. 13(1) के तहत शून्य है। विद्वान न्यायाधीश की यह भी राय थी कि यह संविधान के अनु. 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप के लिए उपयुक्त मामला नहीं था। दूसरे विद्वान न्यायाधीश ने इस बात पर काफी संदेह व्यक्त किया कि क्या इस प्रकार का कोई कानून, जो रूप और सार में न्यायालय की डिक्री था, विधानमंडल की क्षमता के भीतर था और संविधान द्वारा समर्थित था। हालाँकि, वह अपने विद्वान सहयोगी से सहमत थे कि मामला ऐसा नहीं है कि संविधान के अनु. 226 के तहत अपनी विवेकाधीन शक्तियों के प्रयोग में उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप को उचित ठहराया जा

सके। उनके अनुसार, याचिकाकर्ताओं का समाधान नियमित रूप से गठित मुकदमे में निहित हो सकता है।

इसलिए, परिणाम यह हुआ कि अपीलकर्ताओं की याचिका खारिज कर दी गई और यह इस निर्णय की औचित्य है जिस पर इस अपील में हमारे सामने हमला किया गया है।

श्री पी.आर दास, जो अपील के समर्थन में उपस्थित हुए, ने अपने तर्कों में सबसे आगे अपने मुवक्किल की ओर से नीचे दिए गए न्यायालय में उठाए गए तर्क को रखा कि मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने के कारण लागू कानून संविधान के अनु. 14 के तहत अमान्य था। अपीलकर्ताओं का यह मुद्दा हमें उचित लगा और इस बिंदु पर विद्वान अटॉर्नी-जनरल को सुनने के बाद हम संतुष्ट हुए कि श्री दास का तर्क अच्छी तरह से स्थापित था और इसमें उठाए गए किसी भी अन्य आधार के बावजूद, प्रबल होने का हकदार था।

इस न्यायालय द्वारा कई निर्णय लिए गए हैं जहां संविधान के समान सुरक्षा खंड में निहित गारंटी की प्रकृति और दायरे के बारे में प्रश्न विचार के लिए आए और सामान्य सिद्धांतों को काफी अच्छी तरह से तय किया जा सकता है। इस खंड का उद्देश्य शत्रुतापूर्ण भेदभाव या असमानता के उत्पीड़न पर प्रहार करना है। चूँकि गारंटी समान रूप से स्थित सभी व्यक्तियों पर लागू होती है, यह निश्चित रूप से विधानमंडल के लिए विशिष्ट विधायी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों और चीजों को वर्गीकृत

करने के लिए खुला है; लेकिन ऐसा चयन या भेदभाव मनमाना नहीं होना चाहिए और विधायिका के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय आधार पर आधारित होना चाहिए। इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि वर्तमान मामले में कानून ने दो व्यक्तियों और उनके और एक अन्य निजी पार्टी, बेतिया वाड्र्स एस्टेट्स के बीच किए गए एक अकेले लेनदेन को अलग कर दिया है और लेनदेन को इस आधार पर शून्य घोषित कर दिया है कि यह है कानून के प्रावधानों के विपरीत है, हालांकि किसी भी न्यायिक न्यायाधिकरण द्वारा इस बिंदु पर कोई निर्णय नहीं दिया गया है। हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए यह चर्चा शुरू करना आवश्यक नहीं है कि हमारे संविधान में शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को कितनी मान्यता दी गई है और क्या विधायिका न्यायपालिका की शक्तियों को अपने पास रख सकती है और निजी पक्षों के बीच विवादों का फैसला एक के विरुद्ध दूसरे के अधिकारों की घोषणा करने के लिए आगे बढ़ सकती है। उन सीमाओं को निर्दिष्ट करने का प्रयास करना भी अनावश्यक है जिनके भीतर निजी अधिकारों से संबंधित कोई भी कानून हमारे संविधान के दायरे में संभव है। एक बिंदु पर हमारा संविधान पूर्णतः स्पष्ट है, अर्थात्, कोई भी कानून वैध नहीं है जो संविधान के भाग III के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को छीनता या कम करता है। इसलिए,इसमें कोई सवाल नहीं हो सकता है कि यदि वर्तमान मामले में कानून संविधान के अनु. 14 के दायरे में आता है तो इसे अवैध घोषित किया जाना चाहिए। यह हमें इस प्रश्न की ओर ले जाता है कि क्या विवादित अधिनियम वास्तव में भेदभावपूर्ण है और यदि

हां, तो क्या इसके द्वारा किए गए भेदभाव को उचित वर्गीकरण के किसी भी सिद्धांत पर उचित ठहराया जा सकता है?

अपीलकर्ता के अनुसार यह विवादित नहीं है, कई पट्टा धारकों में से केवल दो हैं, जिनके पास बेतिया वार्ड एस्टेट के तहत रैयती भूमि है।इस बात पर भी विवाद नहीं किया जा सकता है कि एक ओर एस्टेट के प्रबंधक और दूसरी ओर कलेक्टर और डिविजनल कमिश्नर द्वारा सामने रखे गए संबंधित विचारों पर उचित विचार के बाद राजस्व बोर्ड की सिफारिश पर भूमि का बन्दोबस्त उनके साथ किया गया था। अपीलकर्ता स्वीकार करते हैं कि वे किराए का भुगतान कर रहे हैं, जिसका मूल्यांकन आम तौर पर इलाके में समान विवरण वाली भूमि पर किया जाता है। विद्वान अटॉर्नी-जनरल हमें इस संबंध में धारा 18, कोर्ट ऑफ वार्ड्स अधिनियम के प्रावधानों के बारे में बताते हैं और तर्क देते हैं कि विवादित पट्टा उस धारा के उल्लंघन में दिया गया था। धारा 18, कोर्ट ऑफ वार्ड्स अधिनियम, इस प्रकार प्रदान करता है:

"न्यायालय अपने प्रभार के तहत किसी भी संपत्ति के पट्टे या फार्म देने की मंजूरी दे सकता है... और ऐसे सभी अन्य कार्यों को करने का निर्देश दे सकता है जो वार्ड की संपत्ति के लाभ और हित के लिए सबसे अधिक उपयुक्त हो सकता है।**

जाहिरा तौर पर यह वार्ड न्यायालय को वार्ड की संपत्ति या लाभ के लाभ का एकमात्र न्यायाधीश बनाता है। लेकिन ऐसा कहा जाता है कि कोर्ट

ऑफ वार्ड्स ने इस मामले में अपना दिमाग ठीक से नहीं लगाया जब उसने अपीलकर्ताओं को सेलामी की सामान्य दर से आधे पर पट्टा दिया। इस प्रकार वार्ड एस्टेट को लगभग 4000 रु. की हानि हुई। जो वैध रूप से किसी अन्य पट्टेदार से वसूल किया जा सकता था। यह विवाद हमें अधिक प्रभावित नहीं करता; अधिकतम यह कहा जा सकता है कि इसे अदालत में पट्टे को रद्द करने के आधार के रूप में सामने रखा जा सकता था, इसका मूल्य क्या है और इसका परिणाम क्या होगा, यह कोई नहीं कह सकता। लेकिन यह वह प्रश्न नहीं है जो हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए बिल्कुल भी प्रासंगिक है; हमें यह तय करने के लिए नहीं बुलाया गया था कि पट्टा उचित था या संपत्ति के लिए फायदेमंद था। हमारे निर्णय के लिए प्रश्न यह है कि जहां तक अपीलकर्ताओं का सवाल है, क्या क़ानून में भेदभावपूर्ण प्रावधान शामिल हैं और यदि हां, तो क्या इन भेदभावों को उचित रूप से न्यायोचित ठहराया जा सकता है? अपीलकर्ताओं द्वारा अपनी याचिका के समर्थन में दिए गए हलफनामे के पैरा 9 में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ऐसे कई अन्य व्यक्ति हैं जिन्हें बेतिया वार्ड्स एस्टेट द्वारा समान शर्तों पर पट्टे दिए गए थे। पैरा के खंड (बी), (सी) और (डी)। हलफनामे के 9 इस प्रकार हैं:

(बी) कोर्ट ऑफ वार्ड्स द्वारा प्रबंधन के इस लंबे क्रम में, भूमि के पट्टे या बंदोबस्ती बिना किसी सेलामी के, उचित किराए पर की जाती थी।

यह स्थिति हाल के दिनों तक जारी रही, इस अवधि के दौरान हजारों बीघे भूमि का निपटान कई व्यक्तियों के साथ किया गया था;

(सी) 1945 में अधिकारियों ने युद्ध में लौटे सैनिकों के साथ समान भूमि के लिए इलाके में प्रचलित औसत किराए के 5 गुना के बराबर सेलामी पर बड़े पैमाने पर बस्तियां बनाने का फैसला किया;

(डी) 1946, 1947, 1948 और 1949 में लगभग 200 एकड़ भूमि को कवर करने वाली बड़ी संख्या में बस्तियों को इलाके में 10 साल के किराये के आधार पर और कुछ मामलों में अच्छे कारणों से, पांच साल के किराये पर बसाया गया था।

उत्तरदाताओं की ओर से दिए गए प्रतिशपथ पत्र के पैरा सं. 12 में इन कथनों का खंडन नहीं किया गया है। वास्तव में, उन्हें स्वीकार कर लिया गया है और केवल यही कहा गया है कि ये पट्टे उचित प्रबंधन के दौरान दिए गए थे। रामास्वामी जे. ने मामले के इस हिस्से को केवल यह टिप्पणी करके खारिज कर दिया है कि अपीलकर्ताओं द्वारा इन समझौतों का कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया था; लेकिन जब बयानों की सत्यता को उत्तरदाताओं द्वारा चुनौती नहीं दी गई तो कोई भी विवरण आवश्यक नहीं था। यह ध्यान रखना दिलचस्प होगा कि उत्तरदाताओं ने स्वयं पैरा में 10 में उनके जवाबी हलफनामे में श्री प्रजापति मिश्रा के नाम का उल्लेख उन व्यक्तियों में से एक के रूप में किया गया था जिनके साथ बेतिया एस्टेट द्वारा भूमि का समान समझौता किया गया था। उस पैराग्राफ में कहा

गया है कि अपीलकर्ताओं के साथ-साथ प्रजापति मिश्रा के मामलों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्य समिति के ध्यान में लाया गया और समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि दोनों समझौते कानून के प्रावधानों के विपरीत थे। इसके बाद इन दोनों पट्टाधारकों से अनुरोध किया गया कि

वे अपनी भूमि एस्टेट को वापस कर दें। लेकिन जबकि प्रजापति मिश्रा ने अपनी जमीन बेतिया एस्टेट को वापस कर दी, अपीलकर्ताओं ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। इस बयान के जवाब में, अपीलकर्ताओं ने अपने प्रत्युत्तर में कहा कि उक्त प्रजापति मिश्रा ने जमीनें खाली नहीं कीं, बल्कि उसके संबंध में एक ट्रस्ट बनाया, वह न्यासी बोर्ड के अध्यक्ष थे और जमीनें अभी भी न्यासियों के बोर्ड के कब्जे में थीं। अजीब बात है, जैसा कि प्रतीत होता है, बिहार राज्य ने एक और हलफनामे में इस मामले को फिर से उठाया जहां यह स्वीकार किया गया कि उक्त प्रजापति मिश्रा ने एक ट्रस्ट निष्पादित किया था और ट्रस्टियों ने संपत्ति पर कब्जा कर लिया था। हालाँकि, यह कहा गया था कि ट्रस्टियों में से एक, प्रजापति मिश्रा ने वास्तव में दो किस्तों में जमीनें सौंप दीं, लेकिन अन्य ट्रस्टियों ने ऐसा नहीं किया, और इसलिए उनसे संपत्ति वापस पाने के तरीकों और माध्यमों का पता लगाने के लिए कानूनी सलाह ली जा रही थी। उन्हें। ऐसा लगता है कि इस पूरे मामले में बेईमानी की बू आ रही है और बिहार राज्य को भेदभाव के आधार पर कानून पर अपीलकर्ताओं के हमले को रोकने के प्रयास में इस तरह के तथ्यों पर भरोसा करने की सलाह नहीं दी गई थी।

जो भी हो, इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलकर्ता बेतिया एस्टेट के तहत एकमात्र पट्टेदार नहीं थे, जिन्हें पांच साल के किराये की सेलमी पर भूमि का बंदोबस्त मिला था। अपीलकर्ताओं के शपथपूर्ण बयानों पर, जिन्हें दूसरे पक्ष द्वारा चुनौती नहीं दी गई है, ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ताओं के समान पद पर कई व्यक्ति हैं, जो हालांकि इस ज़ब्ती कानून के अधीन नहीं थे। लेकिन इस कानून में बुराई इससे कहीं ज्यादा गहरी है. यह केवल अपीलकर्ताओं के साथ वाड्र्स एस्टेट के तहत अन्य पट्टेदारों से अलग व्यवहार करने का सवाल नहीं है, जिनके साथ भूमि का निपटान समान या समान शर्तों पर किया गया है। यदि कोई पट्टा कोर्ट ऑफ वाड्र्स द्वारा दिया गया है, जो संपत्ति के लाभ या वार्ड के लाभ के लिए नहीं है, तो यह निर्णय लेना कोर्ट का काम है कि क्या यह कोर्ट ऑफ वाड्र्स अधिनियम की शर्तों के तहत उचित है। यदि पट्टादाता पट्टे को रद्द करने के लिए आगे बढ़ता है, तो पट्टेदार के पास अपने दावे का बचाव करने और न्यायालय को संतुष्ट करने का कानूनी अधिकार है कि पट्टा कानून का उल्लंघन नहीं है। दूसरी ओर, यदि पट्टेदार वास्तव में बेदखल कर दिया गया है, तो उसे यह साबित करने पर कि उसे अवैध रूप से बेदखल कर दिया गया है, संपत्ति पर कब्जा वापस पाने के लिए अदालत में मुकदमा करने का अधिकार है। यहां विवाद, दो निजी पक्षों के बीच शुद्ध और सरल कानूनी विवाद है। विधायिका ने जो किया है वह इन दो व्यक्तियों को अलग करना है और उन्हें उस अधिकार से वंचित करना है जो प्रत्येक भारतीय नागरिक के पास उसके मामले पर लागू होने वाले कानून

के अनुसार न्यायिक न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय लेने का अधिकार है। सबसे तुच्छ नागरिक को अपनी उचित शिकायतों के निवारण के लिए न्यायालय तक पहुंचने का अधिकार है और इस अधिनियम द्वारा अपीलकर्ताओं को इस अधिकार से वंचित कर दिया गया है। भेदभाव के इससे बदतर रूप की कल्पना करना असंभव है जो किसी व्यक्ति विशेष को उसके सभी साथी विषयों से अलग करता है और उसे ऐसी विकलांगता के साथ पेश करता है जो किसी और पर नहीं थोपी जाती है और जिसके खिलाफ शिकायत का अधिकार भी छीन लिया जाता है। विद्वान अटॉर्नी-जनरल, जिन्होंने अपना मामला अपनी सामान्य निष्पक्षता और क्षमता के साथ रखा, कोई ठोस या संतोषजनक कारण सामने नहीं रख सके जिसके आधार पर इस कानून को उचित ठहराया जा सके। यह सच है कि धारणा विधायी अधिनियम की संवैधानिकता के पक्ष में है और यह माना जाना चाहिए कि विधायिका अपने लोगों की जरूरतों को समझती है और सही ढंग से उनकी सराहना करती है। लेकिन जब किसी क़ानून के धरातल पर कोई वर्गीकरण नहीं होता है, और किसी व्यक्ति या समूह को उस व्यक्ति या समूह से संबंधित किसी विशिष्ट विशेषता के संदर्भ में चुनने का कोई प्रयास नहीं किया गया है और दूसरों के पास नहीं है, तो यह धारणा बहुत कम है या राज्य को कोई सहायता नहीं। हम *गल्फ कोलोराडो आदि कंपनी बनाम एलिस* 165 यूएस 150 में ब्रूअर जे. द्वारा कही गई बातों को लाभ के साथ दोहरा सकते हैं। "इस धारणा को इस हद तक ले जाना कि कुछ व्यक्तियों या निगमों को भेदभावपूर्ण कानून का विरोध करने के लिए कुछ अज्ञात और अस्पष्ट

कारण होना चाहिए, चौदहवें संशोधन के संरक्षण खंड को मात्र रेत की रस्सी बनाना है।"हमारी राय में, वर्तमान मामला सीधे इस न्यायालय द्वारा *एमेरूनिसा बेगम बनाम महबूब बेगम [1953] एस. सी. आर. 404* में प्रतिपादित सिद्धांत के अंतर्गत आता है।

परिणामस्वरूप हम अपील की अनुमति देते हैं और उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करते हैं। परमादेश की प्रकृति में एक रिट उत्तरदाताओं को साथी भूमि (पुनर्स्थापना) अधिनियम 1950 के अनुसरण में कोई कदम नहीं उठाने या उल्लिखित पट्टे में शामिल भूमि के संबंध में अपीलकर्ताओं के कब्जे में हस्तक्षेप न करने का निर्देश जारी किए जाए। अपीलार्थीगण को दोनों न्यायालयों के खर्चे वहन करने होंगे।

बोस न्याय. - मैं अपने लॉर्ड चीफ जस्टिस और अपने विद्वान भाई मुखर्जी से पूरी तरह सहमत हूं।

गुलाम हसन न्याय.: मैं अपने लॉर्ड चीफ जस्टिस और अपने भाई मुखर्जी से सहमत हूं।

भगवती न्याय.: मैं अपने लॉर्ड चीफ जस्टिस और मेरे भाई मुखर्जी द्वारा दिए गए फैसले से पूरी तरह सहमत हूं और कुछ भी उपयोगी नहीं है जिसे मैं इसमें जोड़ सकूं।

अपील स्वीकार।

अपीलार्थीगण के लिए प्रतिनिधिः आइ.एन.श्राॅफ।

प्रत्यर्थीगणके लिए प्रतिनिधिः जी.एच.राजाध्यक्ष।

नोटः यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी ओम प्रकाश शर्मा (आर.जे.एस. जिला न्याया.संवर्ग) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।